ॐ

* भक्ति-मार्ग *

लेखक—

ब्रह्म निष्ठ श्री रघुनाथ स्वामी

(निज पितृ स्मरणार्थ)

Brahmanisth Shri Raghunath Swami, Narela.

भक्त श्रीराम गुप्ता

ने प्रकाशित किया।

मुद्रक—

वीर इण्डिया प्रिन्टिङ्ग प्रेस,

दिल्ली

तृतीय बार]   सन् १९५०   [मूल्य प्रेम

सच्चिदानन्दे
वनविहारी भगव
मानी गई है
वास्तविक देखा
से एक न हो ज
तब तक जीवन
स्थूल हो वा स
परमात्मा की इ
करना और अ
अन्तिम पद है
किन्तु तन, म
और उसी के
का लक्ष्य है
योग द्वारा क्य
वह जीवनमु
आप लोगों
बोलो भगवद्

कृष्ण जन्मा

भूमिका

सच्चिदानन्देश्वराय नमः। सच्चिदानन्द आनन्द कन्द असुरारी वनविहारी भगवान्की प्राप्तिके लिये भक्ति ही एक मुख्य साधन मानी गई है। और सब साधन गौण माने गये हैं, यदि वास्तविक देखा जाय तो विदित होता है कि आत्मा परमात्मा से एक न हो जायँ अर्थात् उसकी इच्छा के आधीन न हो जायें तब तक जीवन में कोई भी आनन्द नहीं और अपनी वासना स्थूल हो वा सूक्ष्म किंचित् भी नहीं रहनी चाहिये। केवल परमात्मा की इच्छा को परम इच्छा समझकर उसको पालन करना और अपने मिथ्या अहंकारका उसमें विस्मरण करना ही अन्तिम पद है भगवत् को त्याग किसी वस्तुका आश्रय न लेना किन्तु तन, मन, प्राण, और आत्मा, को भगवत् से उत्पन्न हुए जान और उसी के आधार समझ उसी में लीन कर देना ही जीवन का लक्ष्य है। कोई कर्म करे वह भगवत् अर्पण हो, ऐसे भक्ति योग द्वारा व्यवहार और परमार्थ में कुछ अन्तर नहीं रहता। वह जीवनमुक्त हो जाता है। सो उस भक्ति का संक्षेपतः विवरण आप लोगों के हस्तगत किया जाता है। सच्चे प्रेम से पढ़ो। और बोलो भगवद्भक्ति की जय।

॥ ओ३म् तत्सत् ॥

भवदीय—

रघुनाथ स्वामी

शान्ति कुटी, शफियाबाद

(जि० रोहतक)

कृष्ण जन्माष्टमी सं० २००७]

der-16 tennis tournament to be

by D. S. Guru, former Principal

convention with some partne

श्रीगणेशाय नमः ।

* अथ भक्ति मार्गः *

अनिवर्चनीयं प्रेम स्वरूपम् ।

भक्ति का अनिर्वचनीय प्रेम स्वरूप है 'मूकास्वादनवत्' गूंगे के स्वाद की तरह उसका आनन्द वर्णन नहीं किया जाता यथा श्रुतिः—

समाधि निर्धूत मलस्य चेतसो निवेश यन्नात्मनि यत्सुखं भवेत् । न शक्यते वर्णयितुं गिरा ॥ ततः स्वयं, अन्तः करणेन गृह्यते ॥

अर्थात्—समाधि के द्वारा चित्त के मल छूट जाने पर, परमेश्वर में चित्त के लग जाने पर जो सुख होता है वह वाणी से कहा नहीं जाता, क्योंकि उसको स्वयं आत्मा शुद्धान्तःकरण से ग्रहण करता है "अमृत स्वरूपा शान्तस्वरूपाच" उस भक्ति का अमृत स्वरूप और शान्तिस्वरूप है "प्रकाश्यते क्वापि पात्रे" यथा वृज गोपिकानाम्, यह भक्ति किसी २ पात्र में प्रकाशमान होती है जैसे वृज गोपियों में 'नास्तितेषु जाति विद्या रूप कुल धन क्रिया भेदः" इस भक्ति के प्राप्त होने में जाति विद्या, रूप, कुल, धन और क्रिया का भेद नहीं है जैसा कि—

व्याधस्याचरणं ध्रुवस्यचवयोः विद्या गजेन्द्रस्यका ।
कुब्जायाः किं नामरूप मधिकं किं तत् सुदाम्नो धनम् ॥

वंशः को विदुरस्य यादवपतेरुग्रस्य किं पौरुषम् ।
भक्त्या तुष्यति केवलं नच गुणैर्भक्तिः प्रियोमाधवः ॥

स्त्री और पुरुष का भेद नहीं, जैसा कि भगवद्वचन है परन्तु जो भगवान् की शरण लेते हैं वह चाहे पापी से भी पापी क्यों न हो और उनकी कैसी भी नीच योनि हो वह भी परमपद मोक्ष को प्राप्त होते हैं यथाः—

अपि चेत्सु दुराचारो भजते मामनन्य भाक् ।
साधुरेवस मन्तव्य सम्यग् व्यवसितोहिसः ॥

अत्यन्त दुराचारी भी एक निश्चय से मेरा भजन करेगा तो उसे भी निश्चित् साधु ही समझना चाहिये, क्योंकि उसका निश्चय अच्छा है :—

मांहि पार्थ व्यपाश्रित्य येपिस्युः पाप योनयः ।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्राः तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥

जो पाप योनियां हैं वह भी मेरा आश्रय करें, वह भी परम पद मोक्ष को प्राप्त हों उसी प्रकार स्त्री वैश्य, शूद्र, कोई भी मुझको आश्रय करके संसृति चक्र में नहीं पड़ता प्रत्युत परम पद को प्राप्त होता है और भी कहा है :—

अद्वेष्टा सर्व भूतानां मैत्रः करुण एवच ।
निर्ममो निरहंकारः सम दुःख सुखः क्षमी ॥
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़ निश्चयः ।
मय्यर्पित मनो बुद्धिर्योमे भक्तः समेप्रियः ॥

सब भूतों में द्वेष रहित, सबका मित्र और दयालु रहे अहंकार से रहित सुख दुःख में समान चित्तवाला क्षमावान् और सदैव सन्तोषी स्थिर चित्त और मनका संयमी है और जिसका दृढ़ निश्चय है और जिसने अपना मन-बुद्धि मुझको अर्पण कर दी है वह मेरा भक्त है, वह मुझे प्रिय है:—

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरुः ।
मामेवैष्यसि युत्क्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

मेरे मन वाला हो, मेरा भक्त बन मुझको नमस्कार कर मुझको ही प्राप्त हो जावेगा। इस प्रकार अपने आपको मेरे परायण कर, यही भक्ति है और भी कहा है:—

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वाकरोतियः ।
लिप्यते न सपानेन पद्म पत्र मिवाम्भसा ॥

जो पुरुष कर्म फल की कामना छोड़ कर्मों को ब्रह्म के अर्पण करता है वह पाप से इस प्रकार लिप्त नहीं होता जैसे पानी से कमल का पत्र लिपायमान नहीं होता, नारद सूत्र में भी कहा है—तदर्पिता अखिला चारता [तद्विस्मरणे परं व्याकुलता] उस परमात्मा के अर्पण अपने सम्पूर्ण कर्मों को कर देवें और उसके विस्मरण में परम व्याकुलता होवे तो तब जानो कि भक्ति का समुद्र मेरे भीतर उमड़ रहा है "सतु कर्म ज्ञानेभ्यो प्यधिकतरः"

वह भक्ति कर्म ज्ञान योगसे भी अधिकतर है 'पुनन्ति-कुलानि पृथ्वीच' भक्त अपने कुल और सम्पूर्ण पृथ्वी को पवित्र करता है सर्व सांसारिक वासनाओंका त्याग विशेष कर काम का त्याग करना और भगवत् चरणों में अतिशय गाढ़ प्रेम, अपनी सर्व वासनाओं के ऊपर भगवत् इच्छा का अधिकार स्थापित करना, अथात् जितनी वासना फुरें सर्व भगवत् इच्छा को पूर्ण करने वाली हों और उसके विरुद्ध कोई वासना न फुरने पावे हृदय में भगवत् प्रेमकी अजस्रधारा ऐसी निरन्तर बहती रहे जैसे गङ्गा का प्रवाह, कभी एक क्षण भी हृदय भगवत् प्रेम से शून्य न रहे और जैसे मीन के लिये जल ही जीवन होता है, वैसे ही भक्ति-मार्ग पर चलने वालेके लिये भगवत प्रेम ही जीवन होता है श्रोत्र से भगवत् के गुण श्रवण करना, जिह्वासे उनके गुण कीर्तन करना, हस्तों से पूजा और सेवा करनी पगों से उसके कार्य पूर्ण करने अर्थात् चलना, मुखसे नाम उच्चारण करना तथा भगवत् कथा का पाठ करना नासिका से भगवत् चरण से स्पर्श हुए पुष्पोंकी सुगन्धि लेनी इत्यादि सबाङ्गों को भगवत् के अर्पण करना ही जीवनका उद्देश्य है। मन से स्वरूप का चिन्तन करना, बुद्धि से ध्यान और चित्त से स्मरण और अहंकार से भगवत् पर अपना मान करना, इस प्रकार आत्मा से आत्म निवेदन, सर्व भगवत् समर्पण करना ही जीवन का आधार है सर्वत्र ही

भगवत्के लिये व्याकुल होना भक्तिका मुख्य साधन माना गया है पद्म पुराण में भगवान् अपनी भक्तिसे अपने भक्तों की भक्ति उत्तम बतलाते हैं:—

मम भक्ताः हिये पार्थ नमे भक्तास्तुते मताः ।
मद्भक्तस्यतु ये भक्तास्तेमे युक्त तमाः मताः ॥

हे पार्थ जो मेरे भक्त हैं वे भक्त नहीं किन्तु जो मेरे भक्तों के भक्त हैं वे मेरे मत में श्रेष्ठ हैं । भगवान अपने भक्तों के लिये अपने प्रण को छोड़ भक्तों के प्रण को पालते हैं जिस प्रकार अपनी प्रतिज्ञा छोड़ भीष्मजी की प्रतिज्ञा पूरी करी इससे परम भक्त भीष्म पितामह पूरा विश्वास कर ये शब्द कहते हैं—

॥ भजन ॥

आज जो मैं हरि है न शस्त्र गहाऊं ॥ टेक ॥
तो लाजूं गङ्गा जननीको शान्तनु सुत न कहाऊं ।
स्यन्दन खण्ड सारथिय खण्डों कपिध्वज सहित गिराऊं ।
पांडव दल सन्मुख ह्वै धाऊं सरिता रुधिर बहाऊं ।
इतनो न करूं शपथ मोय हरिकी क्षत्री गति नहीं पाऊं ।
सूरदास रणभूमि विजय बिन जीवत न पीठ दिखाऊं ॥

इसी प्रकार सच्चिदानन्द श्री पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण और सीता सहित नदी पर पहुंचकर केवट को नवका लाने की आज्ञा दी तो केवट भगवान् का परम भक्त उनकी आज्ञानुसार नवका लाकर उपस्थित हुआ और प्रेम पूर्वक बोला महाराज अपने चरण प्रथम धुलवा के नवका पर आरूढ़ हूजिये क्योंकि आपके चरणों की रज से पाषाण की शिला बनी हुई स्वर्ग को चली गई ऐसे ही मेरी नवका चली गई तो मेरा निर्वाह किस पर होगा और मैं अपने कुटुम्ब सहित आपके चरणामृत को पान करूंगा तो हमारा स्वर्ग में वास होगा तो भगवान् ने, अपने भक्त की विनय सुनकर वैसा ही किया जब पार उतर कर उसको उतराई देने लगे तो उसने निम्नलिखित प्रेम भरे शब्द कहे :—

॥ श्लोक ॥

अहंतु नेंद्यः पर पार कर्तात्वं वैभवाब्धेः परपार कर्ता ।
न नाविकां नाविक एव कर्म मौल्यं लभेत्तर्हि कथं तदेमि ॥
त्वत्तो न गृह्णामि यथाह मेद्यः ग्राह्यं तथा वैभवता न तत्र ।
इत्थं प्रकारेण मया त्वयाच धर्मं व्यवस्था परिपाल नीया ॥१॥

हे महाराज मैं इस नदी से पार उतारने वाला हूँ और आप संसार सागर से पार उतारने वाले हो, इससे दोनों

मल्लाह ठहरे नाविक से नाविक उतराई नहीं लेता है सो मैं यह अनरीत कैसे करूँ। आज मैं जैसे तुम से उतराई नहीं लेता हूँ इसी प्रकार जब मैं कुटुम्ब सहित आपके घाट पर आऊँ तब मुझसे आप उतराई न लेना, इस प्रकार आपको औ· मुझको धर्म की व्यवस्था पालन करनी चाहिये।

इसका भावार्थ निम्न लिखित कवित्त से समझना—

जात पात न्यारी करी हमरी तुम्हारी नाथ केवट के कर्म एक नीके कै निहारिये। तुम तो उतारो भवसागर परमारथ सरिता उतार हम कुटुम्ब गुजारिये॥ नाई ते न नाई लेत धोबी ना धुलाई लेत देके उतराई मोहू जात ना बिगारिये। पेशा अधमाई जान आप को उतार दीनों थारे घाट आये नाथ मोहू को उतारिये॥ १॥

इसी प्रकार जब भगवान् शिवरी के यहां गये तो जात पात का कुछ ख्याल न कर केवल भक्ति का ही गाढ़ नाता माना जैसा कि अध्यात्म रामायण में लिखा है—

पुंसत्वे स्त्रीत्वे विशेषो वा जाति नामाश्रमोद्भवः।
न कारणं मद्भजने भक्तिरेव हि कारणम्॥
यज्ञदान तपो भिर्वा वेदाध्ययन कर्मभिः।
नैव द्रष्टु महं शक्तो मद्भक्तिः विमुखैः सदा॥

अर्थ—रामजी कहते हैं कि पुरुष स्त्री, जाति और आश्रम ये मेरे भजन में कोई कारण नहीं केवल भक्ति कारण है और जो मेरी भक्ति से विमुख है वे यज्ञ दान तप और वेदाध्ययनादि कर्मों को करके मुझे कभी नहीं देख सकते।

भक्ति नव प्रकार की बतलाई है यथा—

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पाद सेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम्॥

१—परमेश्वर के गुण और माहात्म्य सुनने की भक्ति।
२—ईश्वर के रूप की भक्ति। ३—पूजा की भक्ति।
४—स्मरण करने की भक्ति। ५—दास्य भाव की भक्ति।
६—सखा भाव की भक्ति। ७—कान्ता भाव की भक्ति।
८—आत्म निवेदन की भक्ति। ९—तन्मय रूपकी भक्ति।

अब नवधा भक्तों को वर्णन करते हैं—तथा च

॥ श्लोक ॥

श्रीविष्णोः श्रवणे परीक्षादभव द्वैयासकी कीर्त्तने।
प्रल्हादः स्मरणे तदंघ्रि भजने लक्ष्मीः पृथुः पूजने॥
अक्रूरस्त्वभि वन्दने कपिपति र्दास्ये थ सख्येर्जुनः।
सर्वस्वात्म निवेदने बलिरभूता कृष्णाप्तिरेषा परा॥

भगवान् को श्रवण करने में परीक्षित हुआ। व्यास जी कीर्त्तन में। प्रह्लाद स्मरण करने में। लक्ष्मी भगवान्

की सेवा में। पृथू पूजा करने में। अक्रूर वन्दना करने में। महावीर दासपने में। अर्जुन मित्र भाव में। और अपना सर्वस्व अपण करने में वली हुआ। यह श्रीकृष्ण की परम प्राप्त है।

एक समय श्रीकृष्ण मथुरा को जाने लगे तो एक सुकेती नाम की गोपी कहने लगी कि महाराज मेरे स्थान पर पधारकर मुझे भी कृतार्थ करें। यह सुनकर कभी प्रेम में मग्न हो जावेंगे, इस भांति से बिना मिले ही चले गये तो सुकेती विरह अग्नि में दग्ध होकर भस्मीभूत हो गई। तो श्री नन्द नन्दन भक्त वत्सल ने भक्तों की पीड़ा को न सहते हुए सुकेती की भस्म राशि के समीप आकर विचार किया कि मेरी प्यारी की भस्म को अङ्ग में लगा-कर गङ्गा में स्थापित कर देऊं तो कुछ विरहाग्नि शान्त होवे। यह समझ कर प्यारे ने भस्म का रूप धारण करके सुकेति की भस्म अङ्ग में लगा कर गङ्गा में गोता लगाकर आवृत्ति की तो चार गोपियां इस चरित्र को देख कर कहने लगी।

चन्द्रिका गोपी कहती है--

बाग नहीं वाड़ी नहीं नहीं फूल पर संग!
भ्रमर बावरो हो रह्यो भस्म रमावत अंग॥

यह श्रवण कर सुमति नाम की गोपी ने कहा है--

कदेक होती केतकी वसतो वाके संग।
भ्रमर बावरो हो रह्यो भस्म रमावत अंग॥

फिर चन्द्रभागा गोपी ने कहा कि--

होतो तो रहतो नहीं जरतो वामे सङ्ग।
प्रकट प्रीति के कारणे भस्म रमावत अङ्ग॥

फिर चन्द्रकान्त नाम की गोपी ने कहः--

होतो तो रहतो नहीं जलतो वाके सङ्ग।
प्रीति पुरानी कारणे भस्म रमावत अङ्ग॥

फिर चन्द्रकान्ता ने कहा—

होतो तो रहतो नहीं, जरतो वाके संग।
कपट प्रीति के कारने भस्म रमावत अङ्ग॥

अतएव गोपियों की भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र में जैसी भक्ति थी उस भक्ति के लिये, ब्रह्मादिक भी भटकते रहते हैं:--कबीरजी कहते हैं।

एक गोपी के प्रेम में बह गये कोटि कबीर।

भगवान् ने भी कहा है कि मुझे न ब्रह्मा न शिव न कोई और देवता प्यारे हैं जैसी कि मुझे ब्रज की गोपी प्यारी हैं। शुकदेवजी कहते हैं:--

तासां तपः किं कथयामि राजन्।
पूर्णे परे ब्रह्मणि वासुदेवे॥
याश्चक्रिरे प्रेम हृदिन्द्रियाद्यैः।
विसृज्य लोक व्यवहार मार्गम्॥

हे राजन्! जिन्होंने लोक और व्यवहार मार्ग को छोड़ पूर्ण ब्रह्म वासुदेव में अपने मन और हृदय को लगा लिया है उनका तप मैं क्या कहूँ।

दशम स्कन्ध भागवत् में ब्रह्माजी कहते हैं:--

श्रेयस्करां भक्ति मुदस्यते विभो।
क्लिश्यन्ति ये केवल बोध लब्धये॥
तेषामसौ श्लेशल एव शिष्यते।
नान्य द्यथा स्थुल तुषाव घातिनाम्॥

हे विभो! जो आपकी कल्याण कारिणी भक्ति को छोड़ कर ज्ञान प्राप्ति के लिये अन्यत्र क्लेश उठाते फिरते हैं, उनको चावलों के तुषको कूटने पर जिस प्रकार क्लेश के सिवा कुछ नहीं मिलता, विदुर ने कहा है--हरि नाम ही मेरा जीवन है, कलियुग में और प्रकार से गति नहीं है, जो भगवान् की भक्ति करते हैं, भगवान् उनकी सर्व प्रकार से रक्षा करते हैं क्योंकि त्रिलोकी की रक्षा की चिन्ता रघुनाथजी को है।

शेष भगवान् कहते हैं--

न भूम्याः पर्वतो भारो न मे भारो वनस्पतेः।
विष्णु भक्ति विहीनस्य तस्य भारो सदा मम॥

अर्थ--न मुझे भूमि का भार है न पर्वतों का न वनस्पतियों का, किन्तु जो विष्णु भक्ति से हीन है उसका भार सदा मेरे ऊपर है।

किसी कवि ने कहा है--

राज वृथा गजराज वृथा बनिता जो वृथा नहिं तरुन समाते।
गर्व वृथा गुण सर्व वृथा अरु द्रव्य वृथा जो चले न चलाते॥

यार वृथा परिवार वृथा संसार वृथा गुरु नित्य चिताते।
एक रकार मकार बिना धिक्कार सभी चतुराई की बातें॥
काहे को वैद्य बुलावत हो मोहि रोग लगा जिन नारी गहोरे।
वह मधुआ मधुरी मुसकान निहारे बिना कहो कैसे जियो रे॥
चन्दन लाय कपूर मिलाय गुलाब छिपाय दुराय धरो रे।
और इलाज बच्छू न बने वृजराज मिलें सो इलाज करोरे॥

अतएव हम सबको भगवद् भक्ति में ही अपना जीवन बिताना चाहिये। यही मनुष्य जीवन का मुख्योद्देश्य है।

अब भक्ति विषय में परम भक्त गुसाईं तुलसीदासजी की कुछ पवित्र चौपाई लिखते हैं।

नाना कर्म धर्म व्रत दाना, संयम नियम यज्ञ जप नाना।
भूत दया द्विज गुरु सेवकाई, विद्या विनय विवेक बड़ाई।
जहां लग साधन वेद बखानी, सबकर फल हरि भक्ति भवानी।
परमधर्म श्रुति विदित अहिंसा, परनिन्दा सम अघन गरिंसा।
मेरे मन प्रभु अस विश्वासा, रामते अधिक रामके दासा।
असविचार जो करे सतसंगा, राम भक्ति तेहि सुलभ विहंगा।
भक्ति हीन गुण सुख सब ऐसे, लवण विनावहु व्यञ्जन जैसे।
भक्तिहीन विरञ्चि किन होई, सब जीवन समप्रिय मोय सोई।
भक्तिवन्त अति नीचहु प्राणी, मोहे प्राण प्रिय सुनु मम वाणी।

—:०:—

जैसा पुरुष संकल्प करता है, वैसा ही हो जाता है—

सति सक्तो नरो याति सद्भावं ह्येक निष्टया ।
कीट को भ्रमरी ध्यायन भ्रमरत्वाय कल्पते ॥

जैस कीट भ्रमरी का ध्यान कर के भ्रमर त्व को प्राप्त होता है, ऐसे ही एक निष्ठा से ब्रह्म का ध्यान करते हूए पुरुष ब्रह्मत्व को प्राप्त होता है ।

यच्चित्तस्तन्मयो भवति गुह्य मेतत्स नातनम् ॥

—०—

॥ इति भक्ति मार्ग समाप्त ॥

❀ ओं शम् ❀

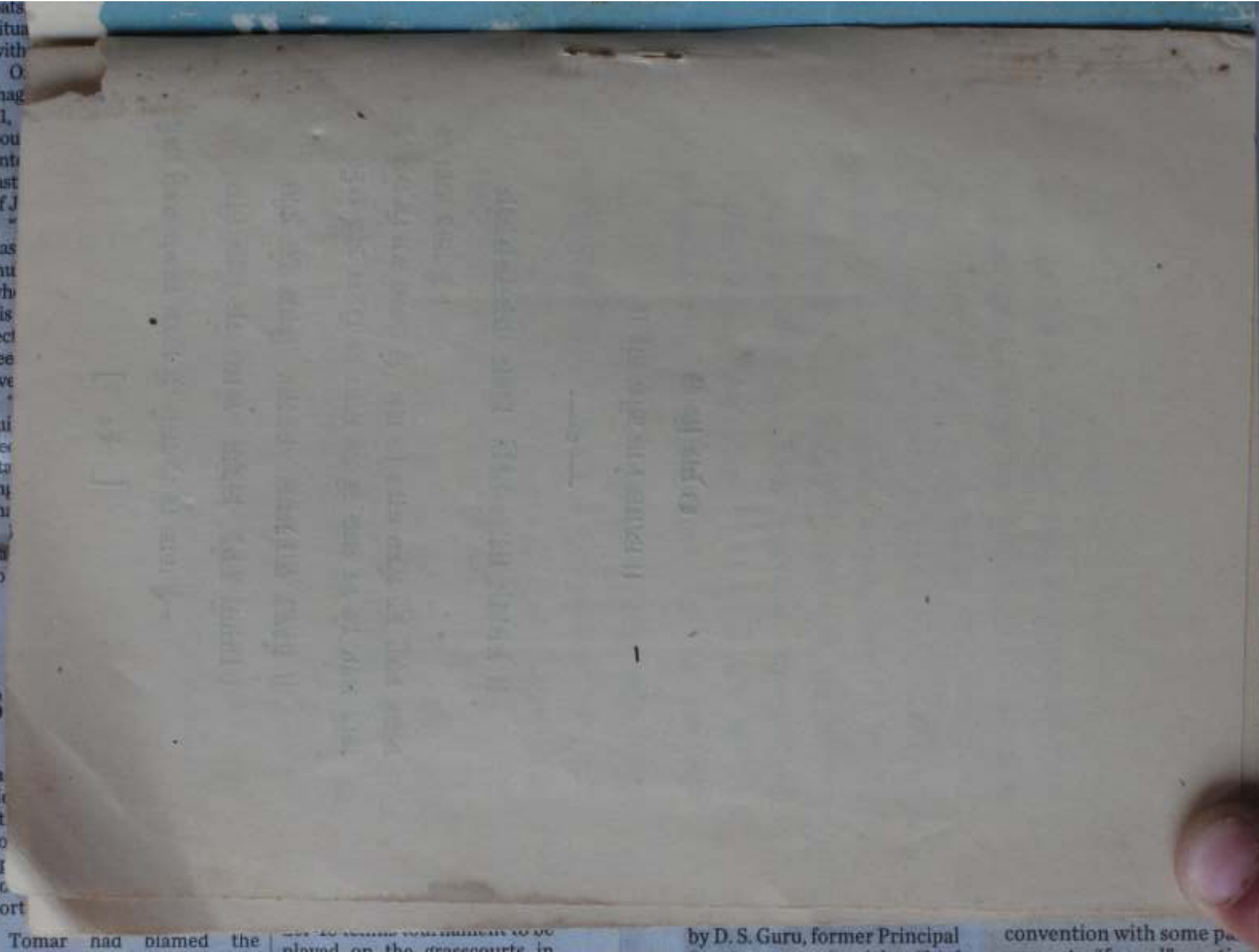

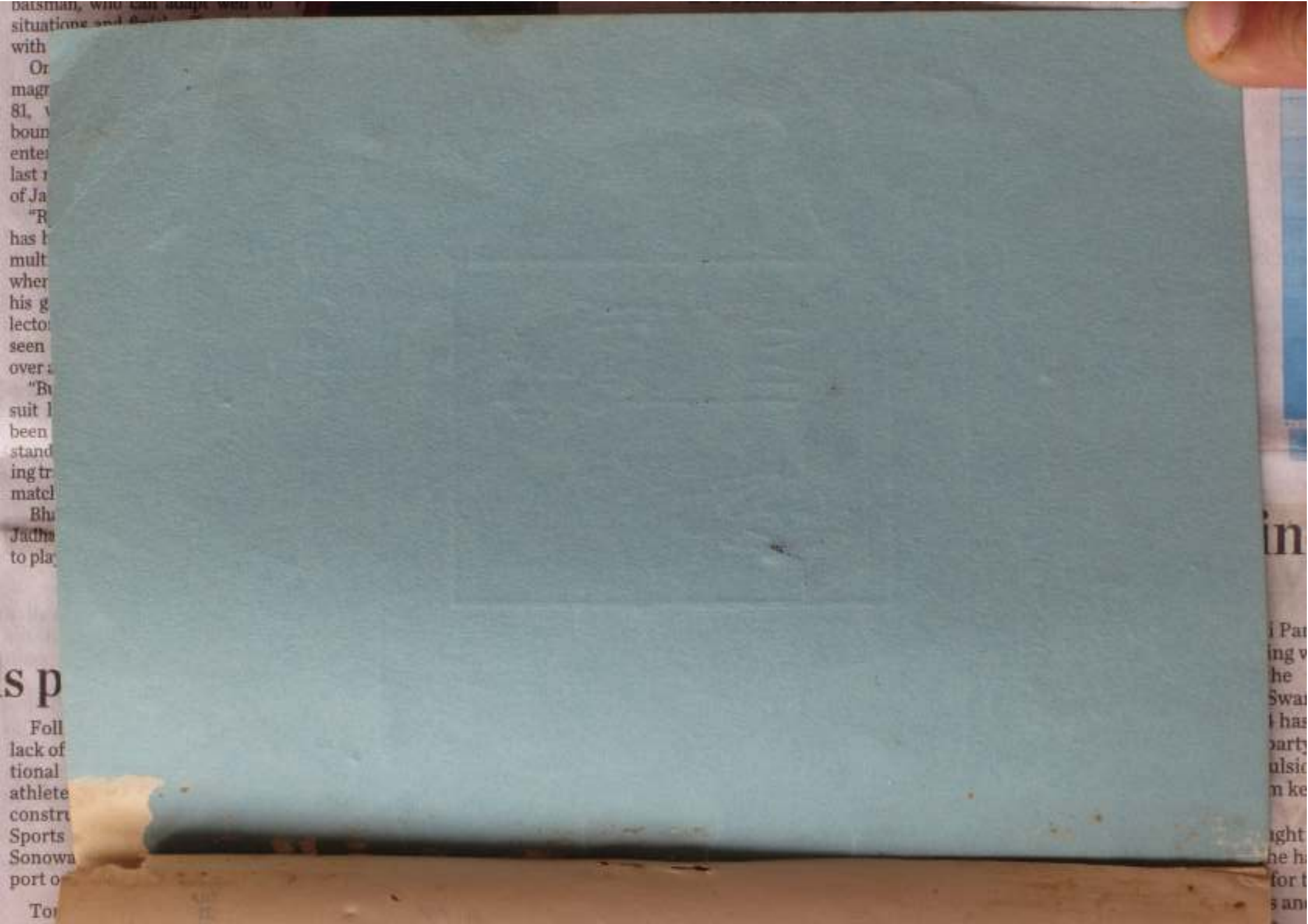

मिलने का पता—
श्रीराम कृष्ण पुस्तकालय,
नरेला, दिल्ली

मिलने का पता—
श्रीराम बनवारी लाल
नरेला मंडी,
(सूबा दिल्ली)